Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 6, May-2019, ISSN 2230-7540

भारतीय विदेश नीति के निर्धारक तत्व

Dr. Renu Bala*

Village-Dhoulra, Post Office-Radour, District-Yamuna Nagar-135133

सारांश – ***किसी भी देश की विदेश नीति के निर्धारक तत्त्वों में देश की भौगोलिक स्थिति, इतिहास, परम्पराएँ, संस्कृति, आर्थिक विकास का स्तर, सैनिक बल तथा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ आदि तत्त्व गिने जाते है। भारत की विदेश नीति के निर्माताओं के समक्ष प्राचीन विद्वान कौटिल्य का दर्शन उपलब्ध था। कौटिल्य एक यथार्थवादी राजनेता था जो कि युद्ध को शक्ति एवं विदेश नीति का प्रमुख समाधान मानता था। सम्राट अशोक ने शांति, स्वतंत्रता तथा समानता के मूल्यों पर बल दिया था। नेहरू ने सम्राट अशोक के आदर्शो पर चलने का निश्चय किया और अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा विवादों के शांतिपूर्ण समाधान जैसे मूल्यों को संविधान के भाग चार में उल्लिखित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में भी शामिल करवाया। भारत की विदेश नीति मूल रूप से गाँधीजी के दर्शन, हमारे स्वतंत्रता संग्राम के आदर्शो तथा भारतीय परम्परा के मौलिक सिद्धान्त 'वसुधैव कुटुम्बकम' पर आधारित है।[1] लोकसभा में बोलते हुए प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने मार्च, 1950 में कहा था, "यह नहीं सोचना चाहिए कि हम बिल्कुल नए सिरे से आरम्भ कर रहे है। यह ऐसी नीति है जो कि हमारे समकालीन इतिहास एवं हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन से निकली है, और जिसका विकास उन विविध आदर्शो से हुआ है जिनकी हमने घोषणा की है।***

संकेत शब्द: विदेश, नीति, भौगोलिक एतत्व

----------X----------

परिचय

विदेश नीति: अर्थ एवं परिभाषाएँ

एक राज्य अन्य राज्यों से किस प्रकार के संबंध रखकर अपना राष्ट्रीय हित प्राप्त कर सकता है यही विदेश नीति का मुख्य प्रयोजन होता है। दूसरे राज्यों से अपने संबंधों के स्वरूप को स्थिर करने के निणयों का कार्यान्वयन ही विदेश नीति है। जे0 आर0 चाइल्ड्यात्रा ने इसे "वैदेशिक संबंधों का सारभूत तत्व (The substance of foreign relations) माना है और राजनय (Diplomacy) को विदेश नीति को क्रियान्वित करने की प्रक्रिया कहा है।"

प्रो0 हिल के अनुसार: "विदेश नीति अन्य देशों के साथ अपने हितों को बढ़ाने के लिए किए जाने वाले किसी राष्ट्र के प्रयासों का समुच्चय है।"

श्लाइचर के शब्दों में "अपने एक व्यापक अर्थ में विदेशी नीति उन उद्देश्यों, योजनाओं तथा क्रियाओं का सामूहिक रूप है जो एक राज्य अपने बाह्य संबंधों को संचालित करने के लिए करता है।"

जार्ज मौडेल्स्की ने विदेश नीति की परिभाषा करते हुए लिखा है "विदेश नीति उन क्रियाकलापों का समुच्चय है जो किसी समुदाय ने अन्य राज्यों का व्यवहार बदलने के लिए और अपने क्रियाकलापों को अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति के साथ समायोजित करने के लिए विकसित किया था।"

रोड़ी तथा क्रिस्टल के अनुसार: "विदेशी नीति के अंतर्गत ऐसे सामान्य सिद्धांतों का निर्धारण और कार्यान्वयन सम्मिलित है जो किसी राज्य के व्यवहार को उस समय प्रभावित करते है जब वह अपने महत्वपूर्ण हितों की रक्षा अथवा संवर्द्धन के लिए दूसरे राज्यों से बातचीत चलाता है।"

फेलिक्स ग्रॉस के शब्दों में: "अपने क्रियात्मक रूप में विदेश नीति एक सरकार की दूसरी सरकार के प्रति, एक राज्य द्वारा दूसरे राज्य के प्रति अथवा एक सरकार द्वारा एक अंतराष्ट्रीय संघ के प्रति अपनाई गई विशिष्ट क्रिया पद्धति हैं।"

इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि विदेश नीति राज्यों की गतिविधियों का एक व्यवस्थित रूप है जिनका विकास दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर राज्य द्वारा किया जाता है और जिसका उद्देश्य दूसरे राज्यों के व्यवहार अथवा आचरण

www.ignited.in

को अपने हितों के अनुरूप परिवर्तित करना है और यदि संभव न हो तो अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का आकलन करते हुए स्वंय अपने व्यवहार में ऐसा परिवर्तन लाना है, जिससे अन्य राज्यों के व्यवहार अथवा क्रियाकलापों के साथ तालमेल बैठ सके।

भारतीय विदेश नीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

किसी भी देश की विदेश नीति एक विशिष्ट आंतरिक व बाह्य वातावरण के स्वरूप द्वारा काफी हद तक निर्धारित की जाती हैं इसके अतिरिक्त उसकी ऐतिहासिक विरासत, व्यक्तित्व, विचारधाराएँ, विभिन्न संरचनाओं आदि का प्रभाव भी उस पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। भारतीय विदेश नीति के प्रमुख लक्ष्यों के निर्धारण एवं सिद्धांतों के प्रतिपादन में भी बहुमुखी तत्वों का योगदान रहा है। लेकिन भारत की विदेश नीति के प्रमुख उद्देश्यों एवं सिद्धांतों को सही दिशा में समझाने हेतु इसके ऐतिहासिक संदर्भ का अध्ययन करना अनिवार्य है, क्योंकि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का विदेश नीति निर्माण पर गहरा प्रभाव होता है। इस संदर्भ पर टिप्पणी करते हुए नेहरू जी ने उचित ही कहा था कि "यह नहीं समझना चाहिए कि भारत ने एकदम नए राज्य के रूप में कार्य प्रारंभ किया है। इसकी नीतियां हमारे भूत व वर्तमान इतिहास तथा राष्ट्रीय आंदोलन के विकास तथा इसके द्वारा अभिव्यक्त विभिन्न आदर्शो पर आधारित हैं।"

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करते हुए कई विशेषज्ञ उसकी उत्पत्ति भारतीय संस्कृति में प्रचलित दो विचारधाराओं से मानते है। ये दो महत्वपूर्ण परंपराऐं है- एक विचारधारा है- मित्रता, सहयोग, शांति, विश्वबंधुत्व व अहिंसा का जिसका विकास अशोक, महात्मा बुद्ध व गांधी के विचारों के रूप में हुआ है जहाँ साध्य के साथ-साथ साधनों की पवित्रता पर बल दिया गया है। दूसरी विचारधारा पाश्चात्य विचार को विशेषकर मैकियाबली की विचारधारा से मेल खाती हुई, कौटिल्य की परम्परा रही है जहाँ यथार्थवाद व शक्ति के महत्व पर बल देते हुए केवल अंतिम साहस की प्राप्ति हेतु किसी भी साधन के औचित्य को स्थापित किया गया है। इस तर्क को मानने वाले विशेषज्ञों का मत है कि भारत ने प्रथम को अपनाया है इसके अनुरूप ही विदेश नीति के उद्देश्यों एवं सिद्धांतों का विकास हुआ हैं।[1]

भारतीय परंपराओं के ऐतिहासिक अनुभवों ने भारतीय विदेश नीति को प्रभावित किया है। भारत की विदेश नीति पर भारतीय दर्शन की नीति विषयक मान्यताओं एवं सामाजिक तत्वों, बौद्धधर्म, जैनधर्म, इस्लाम क्रिश्चियनिटी तथा पश्चिम की औद्योगिक सभ्यता का प्रभाव नजर आता है। हिंदू एवं जैन धर्म में बतलाया गया है कि विश्व की सभी मान्यताओं में सभ्यता के तत्व मौजूद है। लेकिन कोई धर्म, सिद्धांत व मत पूर्ण नहीं है। अर्थात् सभी सिद्धांतों एवं मत-मतान्तरों को सहभाव से रहने का अधिकार है।

विश्व राजनीति में सभी राज्य सदैव अपनी शक्ति को दूसरे राज्यों की तुलना में यथापूर्वक बनाए रखने और बढ़ाने का निरंतर प्रयास करते रहते है। इस कारण प्रत्येक राज्य के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह अन्य देशों का सहयोग प्राप्त करें तथा अन्य राज्यों से आवश्यक सहायता पाने के समझौते व कार्यक्रम बनाये और अपने राजदूतों के माध्यम से इनकी पूर्ति का प्रयास करे। ये सब कार्य अपने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हुए किए जाते है। राष्ट्रीय हित का अभिप्राय अपने देश की विदेशी आक्रमणों से सुरक्षा, प्रादेशिक अखण्डता, देशवासियों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना औद्योगिक उन्नति, आर्थिक समृद्धि तथा सर्वांगीण उत्कर्ष है। इन हितों को दृष्टि में रखते हुए अन्य देशों से संपर्क स्थापित करने के लिए सभी कार्यकलापों का समावेश विदेश नीति में होता है। यह नीति विदेश विभाग द्वारा शासन के उच्चतम अधिकारियों के निर्देशन और नियंत्रण में निश्चित की जाती है और इस नीति के अनुसार अन्य देशों से संबंध स्थापित किए जाते हैं। "इसप्रकार विदेशी नीति अन्य देशों के साथ राष्ट्रीय हित की दृष्टि से किये जाने वाले कार्यकलापों का समुच्चय हैं।"

भारतीय विदेश नीति का ऐतिहासिक विकास

भारत की विदेश नीति का निरंतर विकास हुआ है। यह एक गतिहीन विदेश नीति न होकर गतिशील विदेश नीति है। जैसे-जैसे भारत के राष्ट्रीय हितों में अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन आया, विदेश नीति का स्वरूप भी बदलता गया। पं0 नेहरू के समय भारत 'तटस्थता' और 'गुटनिरपेक्षता' को अत्यधिक महत्व देता था तो श्रीमती इंदिरा गांधी के समय भारत ने सोवियत संघ से संधि करना उचित भारतीय शांति सेना को भेजकर विदेश नीति को नवीन आयाम प्रदान किया। पी0वी0 नरसिंहराव ने नैतिकता तथा मूल्यों पर आधारित नीति पर अधिक बल न देकर आर्थिक पहलू पर अधिक ध्यान देने की चेष्टा की।

भारत की विदेश नीति का उद्भव स्पष्ट करना एक कठिन कार्य है और उसका वास्तविक मूल्यांकन करने के लिए भारतीय विदेश नीति के विकास पर दृष्टिपात करना अत्यंत आवश्यक है। रिचार्ड पार्क ने लिखा है कि भारत की विदेश नीति की गतिशीलता को समझने के लिए ऐतिहासिक तत्वों

का सावधानीपूर्वक विवेचन आवश्यक है। भारतीय विदेश नीति के विकास को चार दौरों में बांटा जा सकता है-

(1) भारतीय विदेश नीति के विकास का प्रथम दौर (1885-1919) अंतर्राष्ट्रीय चेतना का विकास: हम पर शासन करने वाले लोग दूर, बहुत दूर, विलायत से आये थे। यह अनुभूति ही प्रबुद्ध भारतीयों के मन में इंग्लैण्ड और उसके आस-पास के देशों के प्रति उत्सुकता जागृत कने के लिए पर्याप्त थी और जब हमें यह पता लगा कि भारत में कोई महत्वपूर्ण सुधार लंदन की स्वीकृति के बिना नहीं हो सकता तो लंदन के प्रति भारत की उत्सुकता एक विवशता में बदल गई।

भारतीय विदेश नीति के विकास का दूसरा दौर (1919 से 1927)-

प्रथम महायुद्ध तक विश्व की घटनाओं के प्रति भारतीय जनमानस में रुचि का विकास हो चुका था। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं के प्रति भारतीय नेताओं की पकड़ मजबूत होने लगी थी और वे स्पष्ट शब्दों में अपना मत प्रकट करने लगे थे। कांग्रेस के मंच पर विदेशों से लौटे भारतीयों का वर्चस्व बढ़ने लगा था और कांग्रेस के प्रस्तावों में विश्व की घटनाओं के संबंध में विचार व्यक्त किये जाने लगे थे। कांग्रेस की विदेश नीति अंकुरित होने लगी थी।

प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त होने पर पेरिस में शांति वार्ताएं हुई। इन शांति वार्ताओं में भारत को भी प्रतिनिधित्व दिया गया परंतु भारत की ओर से जो लोग प्रतिनिधित्व करने गए वे भारत के नेता नहीं थे। कांग्रेस चाहती थी कि इस सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी और हसन इमाम को भेजा जाए लेकिन भेजे गए भारतीय सचिव मांग्टेग्यु उपसचिव एस.पी. सिन्हा तथा बीकानेर के महाराजा। भारत में इससे बड़ा रोष उत्पन्न हुआ।

इस अवसर पर लोकमान्य तिलक ने पेरिस शांति सम्मेलन के अध्यक्ष क्लेमंशो को एक पत्र लिखा। यह एक ऐतिहासिक पत्र था। इसमें पहली बार भारत की विदेश नीति के संबंध में लिखित रूप से अपना मत प्रतिपादित किया गया था। इसलिए इस पत्र को भारतीय विदेश नीति का महत्वपूर्ण दस्तावेज कहा जा सकता है। लोकमान्य तिलक ने लिखा "सभी दृष्टियों से भारत एक सम्मानयुक्त और स्वावलंबी देश है और संसार के किसी देश की भूमि पर कोई दावा नहीं है अपने विशाल भू-भाग, अपरिमित साधन और अपार जनसंख्या के आधार पर भारत विश्व की महान शक्ति बनने की आकांक्षा रखता है। इस परिस्थिति में पूर्वीय गोलार्द्ध शांति बनाए रखने के काम में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। प्रस्तावित राष्ट्रसंघ का प्रबल समर्थक हो सकता है।" इस पत्र में तिलक ने यह भी लिखा कि युद्ध के दौरान यह वायदा किया गया था कि उपनिवेशों को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया जाये।

इस पत्र से स्पष्ट हो गया कि अंग्रेजों द्वारा संचालित भारत की विदेश नीति भारतीय जनता की इच्छाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करती। भारत की जनता की विदेश नीति का प्रतिनिधित्व कांग्रेस करती है। यही से कांग्रेस की विदेश नीति आरंभ हुई जो बाद में स्वतंत्र भारत की विदेश नीति के रूप में प्रस्फुटित हुई।

अमेरिकी सीनेट में भारत के आत्मनिर्णय का प्रश्न-

पेरिस में हुए शांति सम्मेलन में यह निर्णय किया गया था कि विश्व में शांति स्थापित करने के लिए राष्ट्रसंघ की स्थापना की जाए। अमेरिका भी वर्साय की संधि पर हस्ताक्षर करने वाले देशों में से एक था। परंतु अमेरिकी संविधान के अनुसार अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा की गई प्रत्येक संधि पर सीनेट की पुष्टि आवश्यक है। अतः वर्साय की संधि पर भी सीनेट में वाद विवाद हुआ।

अमेरिका के राष्ट्रपति बुडरो विल्सन ने यह कहा था कि युद्ध के बाद भारत को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया जायेगा। और क्योंकि इस संधि में भारत के लिए आत्मनिर्णय का प्रावधान नहीं किया गया था, इसलिए भारतीयों को इस पर स्वाभाविक रूप से रोष था। कांग्रेस ने चाहा कि अमेरिका की सीनेट में भी वर्साय की संधि पर बहस के समय यह बात उठाई जाये। अतः अमेरिका में रहने वाले भारतीयों को इस संबंध में लिखा गया। उन्होंने अमेरिकी सीनेटरों से संपर्क साधा। 29 अगस्त 1919 को अमेरिका के सीनेटर डउले फील्ड मेलोन ने सीनेट की विदेशी मामलों की समिति के सम्मुख इन प्रश्नों को उठाया। मेलोन ने कहा कि क्योंकि राष्ट्रपति विल्सन के वायदे को संधि में स्थान नहीं दिया गया है, इसलिए वर्साय संधि को अस्वीकार कर दिया जाये। उन्होंने यह भी कहा कि भारत को तुरंत स्वतंत्र किया जाये।

अमेरिका की सीनेट में भारतीय स्वतंत्रता के लिए प्रश्न उठाया गया, इसी से स्पष्ट है कि कांग्रेस विदेश नीति के प्रति कितनी सचेत थी। विदेश नीति के क्षेत्र में कांग्रेस के द्वारा चलाया गया यह पहला सफल कूटनीतिक अभियान था।

www.ignited.in

राष्ट्रसंघ में भारत-

वर्साय संधि के अनुरूप 1919 में राष्ट्रसंघ की स्थापना की गई थी। भारत को भी राष्ट्रसंघ का सदस्य बनाया गया। राष्ट्रसंघ में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए जिन लोगों को चुना जाता वे वास्तव में भारतीय मानस का नहीं, ब्रिटिश हितों का प्रतिनिधित्व करते थे। इस प्रतिनिधि मण्डल का नेतृत्व एक अंग्रेज करता था।

भारतीय विदेश नीति के विकास का तीसरा दौर (1927-1936)-

अब तक कांग्रेस की विदेश नीति संबंधी गतिविधियों का केन्द्र भारत ही था, परंतु विदेश नीति के विकास के तीसरे दौर में भारत ने विश्वमंच पर भी प्रवेश किया। पं. जवाहरलाल नेहरू कांग्रेस में आ चुके थे और कांग्रेस में आते ही उन्हें अग्रिम पंक्ति में स्थान मिला था। आरंभ से ही विश्व राजनीति के प्रति उन्हें गहरी रूचि थी और इस क्षेत्र में वे अत्यंत सक्रिय भी थे।

10 फरवरी 1927 को बेल्जियम के एक नगर ब्रुसेल्स में विश्व के पद दलित राष्ट्रों का सम्मेलन हुआ। जिसमें भारतीय कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में पं. जवाहरलाल नेहरू ने भाग लिया। इस सम्मेलन का आयोजन साम्राज्यवाद विरोधी संघ ने किया था। इसमें 175 प्रतिनिधि मंडलों ने भाग लिया था। सम्मेलन के पीछे जो शक्तियां काम कर रहीं थी, उनमें मुख्य थे ब्रिटेन का श्रमिक दल तथा जर्मनी, रूस व पश्चिमी यूरोपीय देशों के साम्यवादी दल। इस सम्मेलन में पं. जवाहरलाल नेहरू ने बहुत खुबसूरती से और बहुत प्रभावशाली ढंग से भारत का प्रतिनिधित्व किया। इन्होंने कहा कि "हमारे लिए भारत की स्वतंत्रता आवश्यक है, लेकिन हमारी स्वतंत्रता आपके लिए भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। हमारी पराधीनता आपकी स्वतंत्रता के लिए सबसे बड़ी बाधक है। अतः हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप हमारी मदद कीजिए। इसमें आपका भी कल्याण हैं।"

बुरसेल्स सम्मेलन में श्री नेहरू ने भारत का जोरदार प्रतिनिधित्व तो किया, साथ ही उन्होंने विश्व के अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों से व्यक्तिगत संबंध भी स्थापित किए। बाद में जब पं0 नेहरू भारत के प्रधानमंत्री बने और उन्होंने विदेश नीति का संचालन किया, उस समय यह संबंध बहुत काम आये।

ब्रुसेल्स सम्मेलन के बाद विश्व में कई स्थानों पर कई छोटे-छोटे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुए। भारत ने इनमें भी भाग लिया । ये थे -1928 का हालैण्ड का विश्व युवक शांति सम्मेलन, 1928 का ब्रुसेल्स का श्रम और समाज अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन-1929 में काबुल का अखिल एशियाई सम्मेलन, 1929 का टोकियों का अखिल एशियाई सम्मेलन आदि। इन सभी सम्मेलनों में भाग लेने में भारत की विश्व मंच पर गतिविधियों में अत्यधिक वृद्धि हुई। उसके दृष्टिकोण और संपर्क व्यापक होते गए।

चीन के अतिरिक्त श्री नेहरू ने मिस्र और लंका की यात्रा की। वे एशियाई देशों की समस्याओं के प्रति इतने संवेदनशील हो गए कि उन्होंने एशियाई राष्ट्रों का एक संघ तक बनाने की कल्पना व्यक्त की। एशियाई देशों के प्रति बढ़ती हुई सद्भावना के परिणामस्वरूप भारत ने मिस्र, सीरिया, फिलीस्तीन, ईराक और चीन के राष्ट्रवादी नेताओं को उनके स्वतंत्रता संग्राम की सफलता के प्रति शुभकामनाएं भेजी। श्री नेहरू ने कह दिया था, भविष्य में विश्व राजनीति में भारत सहित एशिया एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा।

सभी राष्ट्रों से मैत्रीपूर्ण संबंध

भारत की विदेश नीति हमेशा सभी राष्ट्रों के साथ मित्रतापूर्ण संबंधो की पक्षधर रही है। पं0 जवाहरलाल नेहरू ने कहा था- 'देश की सुरक्षा हेतु अन्य साधनों के बजाय सभी राष्ट्रों के साथ मित्रतापूर्ण संबंधों की नीति जानबूझकर अपनाई गई हैं।1 इन्दिरा गाँधी ने भी एक सेमिनार भाषण में 31 अगस्त, 1970 को कहा था- 'वैमनस्यपूर्ण स्थिति को मित्रता द्वारा सुधारा जा सकता है'।2 सभी से मित्रतापूर्ण संबंध का अर्थ किसी भी दूसरे देश पर आश्रित होना कत्तई नहीं रहा है। इसके अतिरिक्त जहाँ तक सभी से मित्रता का प्रश्न है, वह सैन्य गठबन्धनों के रूप में न रहकर केवल आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आदि संबंधों के क्षेत्रों में होंगे।

इस संदर्भ में दूसरी महत्त्वपूर्ण नीति भारत द्वारा अन्य राष्ट्रों के साथ विचारधाराओं के आधार पर पक्षपात या वरीयता न अपनाने की है। प्रारम्भ से ही जवाहरलाल नेहरू ने दक्षिण-पूर्व एशिया में 'शान्ति क्षेत्र' से शुरूआत करके सम्पूर्ण विश्व में शान्ति की कल्पना की है। अपने 07 सितम्बर, 1946 के प्रथम रेडियों प्रसारण में भारत की विदेश नीति की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए नेहरू ने साम्यवाद, पूँजीवाद व अन्य देशों के बीच समन्वय व सौहार्द्र के आधार पर 'एक विश्व' की कल्पना की थी।

भारत की विदेश नीति के निर्धारक तत्व-

भारत की विदेश नीति के निर्माण में भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, वैचारिक आदि अनेक तत्वों के प्रभाव की विवेचना अग्रांकित है-

www.ignited.in

1. भौगोलिक तत्व-

भारत एक विशाल राष्ट्र है जिसकी लगभग 3500 मील लम्बी समुद्री सीमा और 8,200 मील लम्बी थल सीमा है। समुद्री सीमा का तीन दृष्टियों से विशेष महत्व है। प्रथम-हिन्द महासागर पर अधिकार रखने वाली शक्तियाँ भारत की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न कर सकती है, द्वितीय-भारत का अधिकांश विदेशी व्यापार हिन्द महासागर द्वारा होता है एवं तृतीय-विशाल समुद्र तट की रक्षा के लिए अनिवार्य है कि भारत शक्तिशाली नौ शक्ति का विकास करें।

भारत का 13,120 कि0मी0 लम्बा स्थलीय सीमान्त को दो तरफ से पाकिस्तान, चीन, नेपाल, अफगानिस्तान और बर्मा के साथ मिला हुआ है। उत्तरी कश्मीर अफगानिस्तान से जुड़ा हुआ है तथा पूर्व सोवियत संघ से स्वतन्त्र हुए राज्यों तजाकिस्तान एवं किर्गिस्तान की सीमाओं से वह कुछ ही कि0मी0 दूर है। उत्तर में संसार की सबसे ऊँची चोटी हिमालय की पर्वतमाला है जो 2,800 कि0मी0 लम्बी है। बहुत समय तक इस दुर्गम पर्वतमाला के कारण भारतवासियों में सुरक्षा की धारणा कायम रही, परन्तु आधुनिक काल में यह सोचना कि हिमालय पर्वत देश को उत्तर की दिशा में होने वाले आक्रमणों से सुरक्षा प्रादन करता है, भ्रान्तिमूलक है। इसलिए भारत के लिए अपने पड़ोसी देश में होने वाली घटनाओं के प्रति सजग रहना नितान्त आवश्यक है। बर्मा, नेपाल, चीन, अफगानिस्तान और सोवियत संघ के प्रति भारतीय दृष्टिकोण को हमें इसी आधार पर समझना चाहिए।

2. ऐतिहासिक परम्परा-

भारत की विदेश नीति के निर्धारण में इतिहास की भूमिका कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं रही है। अतीत से ही भारत सहिष्णु और शान्तिप्रिय देश रहा है। इतिहास साक्षी है कि भारत ने किसी देश पर राजनीतिक प्रभाव लादने या उसकी प्रादेशिक अखण्डता को भंग करने की चेष्टा नहीं की। यह ऐतिहासिक परम्परा भारत की पर-राष्ट्र नीति का महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्व हैं। स्वाधीन भारत के पाँच से ज्यादा दशक पूरे हो गए है और इस सम्पूर्ण अवधि में भारत ने सभी देशों के साथ समानता और मित्रता की नीति का अनुसरण किया है। पाकिस्तान ने भारत पर एक के बाद एक आक्रमण किए, किन्तु फिर भी भारत की नीति उसके साथ मैत्री और सह-अस्तित्व की रही है। सन् 1965 के युद्ध में पाकिस्तान से जीती भूमि ताशकन्द समझौते द्वारा एवं सन् 1971 में जीती भूमि शिमला समझौते के अनुसार भारत ने पाकिस्तान को सौंप दी। इसे दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जाएगा कि पाकिस्तान भारत की शान्तिपूर्ण और सह-अस्तित्व की विचारधारा को उसकी दुर्बलता का चिन्ह मानता है। साम्यवादी चीन ने भी भारत के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया अपनाया। सन् 1962 में अचानक विशाल पैमाने पर आक्रमण कर चीन ने भारत की भूमि पर कब्जा कर लिया। उस समय भारत सैनिक दृष्टि से सबल नहीं था। भारत ने सदैव यही प्रयत्न किया कि सैनिक शक्ति के स्थान पर अपनी समझ एवं सहमति द्वारा भूमि वापस प्राप्त की जाए।

3. आर्थिक तत्व-

आर्थिक परिस्थितियों ने भारतीय विदेश नीति को प्रर्याप्त रूप से प्रभावित किया है। लम्बी ब्रितानी दासता एवं शोषण के कारण भारत की अर्थव्यवस्था आजादी के समय जर्जर अवस्था में थी। ब्रितानी सरकार ने हमें विरासत में गरीबी, असमानता से ग्रस्त समाज प्रदान किया था। इस दुरावस्था से मुक्ति पाने हेतु भारत ने नियोजित अर्थव्यवस्था की पद्धति को अपनाया परन्तु योजनाओं को चलाने के लिए जहाँ हमें प्राविधिक ज्ञान की आवश्यकता है, वहाँ धन की आवश्यकता भी पड़ती है। फलतः अनिवार्य रूप से हमें विदेशी आर्थिक सहायता एवं अनुदान पर निर्भर रहना पड़ता है।

4. सैनिक तत्त्व-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय सैनिक दृष्टि से भारत की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती थी। लम्बे समय तक विदेशी दासता में रहने के कारण भारत औद्योगिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ देश थां एक समय था जब हम अपनी सैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अधिकांश सामान ब्रिटेन से मंगाया करते थे, परन्तु सन् 1956 में कृष्ण मेनन के रक्षा मन्त्री बनने के बाद प्रतिरक्षा सामग्री के उत्पादन में कुछ प्रगति हुई।

5. वैयक्तिक तत्त्व-

भारत की विदेश नीति पर वैयक्तिक तत्वों का, विशेषकर पण्डित नेहरू का व्यापक प्रभाव रहा है। पं. नेहरू साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद और फांसीवाद के विरोध एवं विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान के समर्थक थे। वे मैत्री सहयोग और सह-अस्तित्व की नीति के पोषक थे, लेकिन अन्यायपूर्ण आक्रमण को रोकने के लिए शक्ति के प्रयोग को भी उतना ही महत्त्व देते थे। महाशक्तियों के संघर्ष में भारत के लिए वे विलग्नता की नीति को सर्वोत्तम मानते थे। अपने इन्हीं विचारों के अनुरूप् उन्होंने भारत पर-राष्ट्र नीति का निर्माण किया। इसका वर्तमान स्वरूप पं. नेहरू के विचारों का ही प्रतीक है। पं. नेहरू के अतिरिक्त डॉ. राधाकृष्णन्, कृष्ण

www.ignited.in

मेनन, के.एम. पनिक्कर कानाम भी उन विशिष्ट व्यक्तियों सम्मिलित किया जाता है, जिन्होंने भारत की पर-राष्ट्र नीति को प्रभावित किया है। भारत की विदेश नीति पर महात्मा गांधी के विचारों का भी प्रभाव पड़ा। उनकी अहिंसा का सिद्धान्त मूलतः शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति का मूल आधार है। यद्यपि कि, "यह बात संदेहास्पद है कि सत्य और अहिंसा के गांधीवादी सिद्धान्तों का भारत की गृह अथवा पर-राष्ट्र नीति के उपर किसी बड़ी सीमा तक प्रभाव पड़ा है गांधी जी की मृत्यु के तुरन्त बाद नवीन भारत में कम्युनिस्ट और साम्यवादी विरोध का दमन करने के लिए सर्वाधिकारवादी उपायों का प्रयोग किया। .... कश्मीर और हैदराबाद में सशस्त्र हिंसा को काम में लाया गया, नेपाल में आन्तरिक हिंसा की नीति का अनुसरण हुआ। बजट का यह स्वरूप जिसमें आप के लिए 50 प्रतिशत से अधिक व्यवस्था की गई है, इस बात को प्रकट करता है कि भारत की सरकारी नीति में बल पुलिस उपायों को दिया जाता है। इन परिस्थितियों में इस बात पर विश्वास नहीं किया जाता कि भारतीय पर-राष्ट्र नीति पर गांधी जी की अहिंसा के सिद्धान्त का कोई निर्णायक प्रभाव पड़ा है।"1

भारत की विदेश आर्थिक नीति के समक्ष जो मुख्य चुनौतीपूर्ण मुद्दे है, वे निम्न हैं-

1. विश्व व्यापार संगठन की जनवरी, 1995 में स्थापना के साथ बौद्धिक संपदा अधिकारों से संबंधित पेटेंट को लेकर उत्पन्न विवादों को दूर करने एवं अपने आर्थिक व व्यापारिक हितों की रक्षार्थ भारत को एक दीर्घकालीन योजना व रणनीति का निर्माण तीसरी दुनिया के विकासशील राष्ट्रों के साथ मिलकर करना चाहिए।

2. क्षेत्रीय आकांक्षाओं का प्रबंधन दक्षिण एशिया में अधिकाधिक आर्थिक एकीकरण से एक बेहतर राजनीतिक समझ का विकास सार्क के सदस्य राष्ट्रों के मध्य होगा। साप्टा को और अधिक उदार बनाने एवं साफ्टा को वास्तविकता का जामा पहनाने के लिए भारत ने सार्क के 10 वें शिखर सम्मेलन (कोलंबो, जुलाई, 1998) में जो एकतरफा कदम उठाये थे जिनमें भारत द्वारा अन्य दक्षिण एशिया के देशों से आयात की अनेक वस्तुओं पर प्रतिबंध हटाने की घोषणा भी शामिल है। भारत को और अधिक जिम्मेदारी के साथ नीति अभिक्रम (Initiative) उठाने चाहिए। भारत को यह देखना है कि साफ्टा (SAFTA) के ढाँचे में द्विपक्षीय व बहुपक्षीय समस्याओं का समाधान कैसे किया जाये।

3. भारत को विकसित एवं विकासशील देशों के साथ उन समान हितों के आर्थिक, व्यापारिक व निवेश क्षेत्रों का पता लगाना चाहिए जो भारत की विदेश आर्थिक नीति के उद्देश्यों के साथ मेल खाते हों। इसके अतिरिक्त अन्य बहुपक्षीय आर्थिक संगठनों जैसे APEC की सदस्यता प्राप्त करने के लिए कूटनीतिक समर्थन जुटाने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

4. भारत को एक संभावित आर्थिक शक्ति के रूप में प्रोजेक्ट करना चाहिए और उसी के अनुरूप नीति यंत्रों व रणनीतियों को निर्माण करना चाहिए। इसके लिए भारत को अपनी आर्थिक राजनय के उपागम में बदलाव लाना होगा। विश्व आर्थिक व व्यापारिक प्रतिद्वन्द्विता के माहौल में अपने व्यापार समुदाय को प्रोत्साहन देना चाहिए ताकि वे गुणवत्ता को कायम रखते हुए विश्व बाजार में भारत के माल को लोकप्रिय बना सके जिस तरह चीन ने लघु व मध्यम उद्योग को विशेष प्रोत्साहन देकर अपना नियीत व्यापार 140 बिलियन डॉलर प्रतिवर्ष कर दिया है जबकि भारत के व्यापार निर्यात के क्षेत्र में दिनोंदिन गिरावट आ रही है।

वाजपेयी सरकार की विदेश नीति एवं राजनय में पिछली सरकारों की विदेश नीति, उपागम से एक भिन्नता अवश्य नजर आती है। अफगानिस्तान में सत्तारूढ़ तालिबान के भारत विरोधी रवैये से भारत-अफगानिस्तान संबंधों में कड़वाहट एवं ठीलापन आ गया था। पूर्व प्रधानमंत्री इंद्र कुमार गुजराल ने तालिबान सरकार के खिलाफ एक स्पष्ट दृष्टिकोण अपनाया था कि भारत उसकी रूढ़िवादी व धार्मिक कट्टरता की नीतियों से सहमत नहीं है और उन्होंने अपदस्थ रवानी सरकार की खुलमखुल्ला समर्थन किया था। संभवतः इस नीति के फलस्वरूप अफगान मुजाहिदिनों ने पाकिस्तान के उकसाए जाने पर कारगिल में भारत विरोधी अभियान को खतरनाक रंग दिया था। यदि भारत सरकार की कूटनीति में व्यावहारिकता के तत्त्व को स्थान दिया जाता तो अफगानिस्तान में तालिबान सरकार भारत के खिलाफ शत्रुतापूर्ण व्यवहार नहीं करती। निःसंदेह अफगानिस्तान सामरिक दृष्टि से भारत का महत्वपूर्ण पड़ोसी देश है परंतु वाजपेयी सरकार ने यह निर्णय लिया कि तालिबान के साथ सीधी बातचीत की जाए। यह इस बात का प्रकट करता है कि भारत की ताबिान सरकार के साथ मेल-मिलाप की नीति द्वारा पाकिस्तान के प्रभाव को अफगानिस्तान में सीमित किया जा सकता है एवं पाक की गुप्तचर एजेंसी द्वारा अफगानिस्तान में भारत विरोधी आतंकवादी प्रशिक्षण दिये

www.ignited.in

जाने के प्रयासों को विफल किया जा सकता है। परंतु इतना ही पर्याप्त नहीं है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारत को भविष्य में समस्त प्रकार के विकल्पों की तलाश कर अफगानिस्तान ने अपनी नयी भूमिका को परिभाषित कर अपने सामरिक, सुरक्षा एवं आर्थिक हितों की रक्षा करना भी जरूरी होगा।

उद्देश्य

(1) उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद व रंगभेद का विरोध,

(2) सभी राष्ट्रों में मैत्रीपूर्ण संबंध, तथा

(3) भारतीय मूल एवं प्रवासी भारतीयों की रक्षा।

उपसंहार

एक देश की विदेश नीति को सिद्धांतो हितों और उद्देश्यों के एक समुच्चय के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है जिसके द्वारा एक देश अन्य देशों के साथ अपने संबंधों को चलाता है ताकि अन्य देशों के व्यवहार को प्रभावित करने और बदलने के साथ-साथ अपने खुद के व्यवहार को ठीक किया जा सके। भारत के लिए, अपनी विदेश नीति को तराशने का सिद्धांत हमेशा से ही विभिन्न कारकों का पारस्परिक प्रभाव रहा है। इन कारकों में विशेष रूप से वे चार बुनियादी निर्धारक शामिल है जो अंतरर्राष्ट्रीय राजनीति के अखाड़े में भारत के चाल-चलन को संचालित करते है। ये चार निर्धारक है (क) भारत के पारंपरिक और दार्शनिक आधार जो मूल्यों और अन्य देशों के साथ अंतर्राष्ट्रीय शांति, सह-अस्तित्व और मित्रता की नैतिकता को दर्शाता है (ख) उसका भूगोल जो अब तक के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक है जो न केवल भारत के भौगोलिक भूभाग की ओर बल्कि ग्लोब में उकसी स्थिति की ओर भी इशारा करता है। (ग) राष्ट्रीय हित में वह शामिल है जिसमें भारत अपना हित समझताहै चाहे वह सुरक्षा की दृष्टि से हो, आर्थिक दृष्टि से हो या एक तीसरी दुनिया के 'मसीहा' के रूप में हों। (घ) मूल रूप से गतिशील अंतर्राष्ट्रीय माहौल की ओर इशारा करने वाला अंतर्राष्ट्रीय परिवेश जो निश्चित रूप से भारत की विदेश नीति के निर्माण को प्रभावित करेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, मीना: राजीव गाँधी, डायमण्ड पॉकेट बुक, नई दिल्ली, 2004

2. अस्थाना, वन्दना: इंडियाज फारेन पॉलिसी एण्ड सबकन्टीनेन्टल पॉलिटिक्स, कनिष्क पाब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

3. अप्पादोराई, ए0: एसेज इन इंडियन पॉलिटिक्स एण्ड फारेन पॉलिसीज, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0, नई दिल्ली

4. अप्पादोराई, ए0 (सम्पादित): सेलेक्ट डाक्यूमेन्ट्स आन इंडियाज फारेन पालिसी एण्ड रिलेशंस (1947-1972), आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1985

5. कुमार, सतीश (सम्पादित): ईयर बुक आन इंडियाज फारेन पालिसी, (1990-1991), नई दिल्ली, 1991

6. खन्ना, वी0 एन0 एवं अरोड़ा, लिपाक्षी: भारत की विदेशनीति, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0, नई दिल्ली, 2007

7. ग्रोवर, बी0 एल0: भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा संवैधानिक विकास, एस0 चन्द्र कं0, नई दिल्ली

8. गुप्ता, एम0 जी0: राजीव गाँधी फारेन पॉलिसी, ए स्टडी इन कन्टीन्यूटी ऐंड चेंज, एम0 जी0 पब्लिशर्स, आगरा, 1987

9. घई, यू0 आर0: अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, सिद्धान्त एवं व्यवहार, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, जालंधर, 2003

10. चन्द्रा, प्रकाश: इंटरनेशनल रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0, नई दिल्ली, 1983

11. जैन, पुखराज एवं फाड़िया, बी0 एल0: भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2002

12. दत्त, वी0 पी0: इंडिया ऐंड द वर्ल्ड, नई दिल्ली, 1990

13. दीक्षित, जे0 एन0: भारत की विदेश-नीति, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999

14. दीक्षित, जे0 एन0: एक्रास बार्डर्स: फिफ्टी ईयर्स ऑफ़ इण्डियाज फारेन पॉलिसी, नई दिल्ली, 1998

www.ignited.in

15. राय, गाँधी जी: अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, भारती भवन, पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पटना, 1993

Corresponding Author

Dr. Renu Bala*

Village-Dhoulra, Post Office-Radour, District-Yamuna Nagar-135133